दस पुरानी चीज़ें

शशि सबलोक

इतवार मुझे अच्छा लगता है। शायद इसलिए कि इसमें और दिनों जैसी जल्दबाज़ी नहीं होती। यह बात अभी-अभी गए 4 अक्टूबर वाले रविवार की है। अखबार के साथ आने वाली मैगज़ीन को खोलते ही मेरी नज़र मोटे-मोटे अक्षरों में लिखी इबारत पर ठहर गई – ***वो दस चीज़ें जो कल थीं पर आज गुम हो चुकी हैं।*** इस लेख में उन चीज़ों का जिक्र था जो कभी हमारे जीवन का हिस्सा थीं पर अब लगभग खत्म हो गई हैं। इसमें कुछ उन चीज़ों का भी जिक्र था जो बस खत्म होने की कगार पर ही थीं कि लोग उन्हें फिर से इस्तेमाल करने लगे हैं। और उनका ज़माना शायद फिर आने को है।

इस लेख ने मुझे कई चीज़ों की याद दिला दी। रेडियो, चिट्ठी, अलार्म घड़ी, ...हमारे पास भी तो एक अलार्म घड़ी थी। सालों इसके तीखे अलार्म ने मुझे जगाया था। सोने से पहले अलार्म सेट कर चाबी भरने की ज़िम्मेदारी मेरी ही थी। छोटी-सी थी वो घड़ी हमारी जो अपने ही स्टैण्ड में बन्द भी हो जाती थी। हमारी पूरे घर की एक ही घड़ी होती थी वो। आज तो यह भी याद नहीं आया कि वह कब-कहाँ चली गई?

घड़ी की ही तरह कई चीज़ें होंगी जिनकी अब तो यादें तक धुँधली हो गई हैं। कुछ के नाक-नक्श-बदल गए हैं...लालटेन, स्टोव, स्वेटर बुनने की सलाइयाँ! और वो, टेबल पर रखा पंखा। चलते पंखे के सामने मुँह करके फूँकने या भू..ऊ..ऊ..ऊ...भू..ऊ..ऊ की आवाज़ निकालने के खेल हम अकसर खेलते थे। और, घर वालों को हमेशा डर ज़रूर लगा रहता कि कहीं हाथ या कपड़े उसमें न फँस जाएँ। कहा जाता कि फलाँ मोहल्ले के फलाँ पप्पू के कपड़े इसी तरह पंखे में फँस गए थे। पता नहीं, यह खबर देश के सब बड़ों तक कैसे पहुँची होगी! उस समय बिजली, पंखे के स्विच भी तो आज के स्विच से कितने अलग होते थे। काले मोटे, दबाओ तो ज़ोर की खट सुनाई देती थी। शायद इसलिए ही उन्हें लोग खटके कहा करते होंगे। मैं अपने घर की ट्रंक या पेटी को कैसे भूल सकती हूँ? चारपाई के नीचे रखा काला ट्रंक जिस पर हर वक्त ताला लगा रहता था। *बावर्ची* फिल्म देखी है तुमने – राजेश खन्ना और जया भादुड़ी की। उसमें भी एक ऐसा ही बड़ा-सा ताला लगा ट्रंक चारपाई के नीचे रखा रहता था। अन्त तक सस्पेंस बना रहा कि उसमें है क्या। पर, हमारे घर का ट्रंक कभी-कभी खुला करता था। जब खुलता हम सब भाई-बहन उसे घेर कर बैठ जाते। उसकी तो याद तक से फिनाइल की गंध आ जाती है। करीने से रखे कपड़े। माँ की शादी का सूट भी सबसे पहले मैंने उसी ट्रंक में देखा था। हम पहन-पहन कर देखते। माँ डाँटती भी और हँसती भी जाती। बातों का एक सिलसिला-सा चल निकलता। माँ के बचपने से बड़े होने की बातें, स्कूल की, मेले-ठेलों की, उनकी शादी की, हमारे बचपन की....। ट्रंक नहीं था जैसा कोई टाइम मशीन थी। खैर!

अखबार की अगली चीज़ पर नज़र दौड़ाई – चिट्ठी – हाथ से लिखी चिट्ठी। मुझे तो याद ही नहीं आ रहा मैंने पिछली चिट्ठी कब और किसे लिखी थी। और मुझे पिछली बार कब चिट्ठी मिली? एक रिपोर्ट बताती है कि 2000-1 के बीच डाक की संख्या घटकर आधी रह गई है। और इसमें लगातार कमी आती जा रही है। तुमने कभी लाल डिब्बे में चिट्ठी डाली है?

अब शायद ही किसी के घर अच्छी या बुरी खबर तार (टेलीग्राम) से मिलती होगी। असल में फोन जो आ गया है। कुछ फोन ने चिट्ठी, तार की ज़रूरत को कम किया और रही-सही कसर ईमेल ने पूरी कर दी। जिन दिनों मैं रेडियो सिलोन सुना करती थी तब की बात है। (रेडियो सिलोन भी तो अब गुम-सा हो गया है।) एक प्रोग्राम आता था पेन-फ्रेंड (चिट्ठी के ज़रिए दोस्त) बनाने का। उत्तरप्रदेश के किसी गाँव की गज़ाला यास्मीन से मेरी दोस्ती ऐसे ही हुई थी। कई साल तक हमने एक दूसरे को पोस्टकार्ड लिखे। चिट्ठियों का सिलसिला खत्म हुआ तो हम भी खो गए।

पर, आज भी बहुत-से लोग चिट्ठी लिखते होंगे और बहुत से लोगों को चिट्ठी का इन्तज़ार रहता होगा। मेरी ग्यारह साल की बेटी ने बताया कि उसने अपनी टीचर को एक चिट्ठी में वह सब लिखा जो वैसे कहना मुश्किल लगता था। रूठे या करीबी दोस्तों से अपने मन की बात कहने के लिए चिट्ठी से बेहतर क्या है भला। तुम्हारा क्या ख्याल है?

जिस फोन ने चिट्ठियों को कम किया वो भी तो कितना बदल गया है। गोल खाँचों वाला फोन। जिन घरों में पुरानी चीज़ों को भी बड़े ख्याल से रखा जाता है वहाँ शायद यह देखने को मिल जाए। इसमें हर नम्बर का एक खाँचा बना होता था। उसमें उँगली फँसा कर घुमाया जाता था। 1 डायल करने के लिए सबसे कम समय लगता और 9 के लिए पूरा गोला घुमाना पड़ता था। ऐसे फोन तो खैर बहुत पहले की बात है पर आज कितने घरों में लैंडलाइन फोन रह गया है?

अगली गुमशुदा चीज़ है – टीवी का एंटिना। टीवी तब नई-नई आई थी – ब्लैक एंड व्हाइट टीवी। और इसमें कार्यक्रम कुछ ही घंटों के लिए आते थे। दूरदर्शन एकमात्र चैनल होता था। छत पर लगे टीवी के एंटिना के ज़रिए ही दूरदर्शन घरों में आता था। किसी ऊँची जगह से देखने पर छतों पर एंटिना ही एंटीना दिखाई देते थे।

चित्रः सौम्या मैनन

अक्सर ज़रा-सी तेज़ हवा बही कि एंटिना से जुड़ी तार हिल जाती। यानी टीवी की तस्वीरें कभी तेज़-तेज़ हिलने लगतीं, कभी रुक जाती, कभी आवाज़ गायब हो जाती। आजकल तो ब्लैक एंड व्हाइट टीवी बिकने लगभग बन्द हो गए हैं।

हाथों के कई काम अब मशीनें करने लगी हैं। चाहे वो इडली, डोसा बनाने के लिए चावल-दाल पीसने वाला भारी पत्थर हो, सूखे मसाले पीसने का इमामदस्ता हो या चटनी पीसने का सिलबट्टा। टाइपराइटर और कैमरे को भी इसमें जोड़ा गया है। एक समय में हर दफ्तर की एकदम ज़रूरी चीज़ – टाइपराइटर को कम्प्यूटर ने गैर-ज़रूरी बना दिया। टाइपराइटर कम हुआ तो दो सफेद कागज़ों के बीच दबा कार्बन पेपर भी कम हो गया। टाइपिंग में हुई गलती को सुधारने के लिए इस्तेमाल होने वाला सफेद द्रव भी अब कहाँ दिखता है? इसी तरह डिजिटल कैमरे ने फिल्म वाले कैमरे को बाहर का रास्ता दिखा दिया है। कैमरे में डलने वाले फिल्म-रोल को इजाद करने वाले जॉर्ज इस्टमैन ने 1888 में इस्टमैन कोडेक कम्पनी बनाई थी। लेकिन घटती माँग को देखते हुए कम्पनी ने इस जून महीने में कोडेक-क्रोम (पहली रंगीन फिल्म) का उत्पादन बन्द करने की घोषणा की है।

इनमें से कितनी चीज़ों को तो तुमने देखा ही नहीं होगा। शायद उनके बारे में सुना भी न हो। कभी फुरसत मिले तो अपने दोस्तों और बड़ों के साथ मिलकर ऐसी चीज़ों को याद कर सकते हो जो गुम हो चुकी हैं या धीरे-धीरे गुम हो रही हैं। एक और सवाल, तुम्हारे हिसाब वे कौन-सी दस चीज़ें हैं जो अगले दस सालों में चलन से बाहर हो जाएँगी?

हाँ, कुछ चली गई चीज़ें लौटी भी हैं। जैसे इंक पेन, रेडियो, कश्मीर में फिल्मों की शूटिंग....

रंगे हाथ